Review Of Research
Vol. 4 | Issue. 6 | March. 2015
Impact Factor : 3.1402 (UIF)
ISSN:-2249-894X
Available online at www.lbp.world

ORIGINAL ARTICLE

साहित्यिक संकेतार्थ–विज्ञानः प्रतिमान और प्रकिया का प्रश्न

डॉ. रिंपल
एसिसटैंट प्रोफैसर , माता गंगा गर्ल्ज कालेज , तरनतारन.

प्रतिमान का प्रश्न

प्रतिमान वह प्रविधिगत सांचा हैं, जिसके आधार पर प्रदत्त पाठ का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण संभव हो पाता है।[1] साहित्यिक संकेतार्थ विज्ञान के अन्तर्गत आने वाला प्रतिमान विशिष्ट भाषिक और भाषेत्तर संकेतों के सांचों पर निर्भर होगा। अब तक वर्चित सांचे निम्नलिखित हैं–

निर्वचक का सॉचा

''इण्टरप्रिटेंट्स'' अर्थात् निर्वचक की अवधारणा के मूल प्रस्तावी अमरीकी संकेतार्थ वैज्ञानिक पर्स थे। उन्होंने ''आब्जेक्ट'' बताया है, जिसके लिए कोई शब्द उपस्थित होता है। उसे ''मीनिंग'' कहा है, जिसे वह शब्द सम्प्रेषित करता है और उसे ''इन्टरप्रिटेंट'' कहा है, जो उस शब्द से प्रसूत–उद्भूत विचार या भाव है। यह इन्टरप्रिटैंट कुछ नहीं संकेत का साभिप्राय रूप में पड़ने वाला प्रमुख है। रिफेतेयर के अनुसार अर्थ का साभिप्रायता में बदलाव ही ''इण्टरप्रिटेंट'' की संकल्पना को अनिवार्य बना देता है।[2]

अग्रप्रस्तुति का सांचा

''अग्रप्रस्तुति'' चेक भाषावैज्ञानिक मुकारोस्की की अवधारणा है, हिन्दी में डॉ. पाण्डेय शशिभूषण ''शीतांशु'' ने इसे अभिलक्षण से आगे ले जाकर प्रतिमान के रूप में स्वरूपित किया। अग्रप्रस्तुति प्रतिमान अपने चार अभिलक्षणों पर और उनके द्वारा उन्मीलित होने वाली रचना की साभिप्रायता पर विचार करता है। यह प्रतिमान भाषा के सभी स्तरों पर क्रियाशील होता है।[3]

वस्तुतः इसे प्रतिमान बनाने का श्रेय भी रिफेतेयर को ही जाता है।

परासंदेश का सांचा

परासंदेश ''हाइपोग्राम'' का हिन्दी रूपांतर है।

रिफेतेयर अपनी रचना–सिमिओटिक्स ॲव पोयट्री में परासंदेश भ्लचवहतंउ की अवधारणा प्रस्तुत करते हैंः ''हाइपोग्राम'' शब्द या पदबंध को काव्यात्मक रूप में क्रियाशील करता है।[4]

वस्तुतः परासंदेश एक ऐसी संकेत– व्यवस्था है, जिसमें कोई कथन या प्रोडक्शन समाविष्ट होता है। यह पूरे पाठ जितना बड़ा भी हो सकता है। भाषा में इसकी स्थिति यथार्थ भी हो सकती है और संभाव्य भी। यह रचना की भाषा और पूर्वपाठीय भाषा दोनों में हो सकता है।[5]

प्रस्तुत अध्ययन के लिए परासंदेश के सांचे को ग्रहण करते हुए विशिष्ट भाषिक और भाषेतर संकेतों की दिशा में उसे रूपित किया जा रहा है–

परासंदेशीय विशिष्ट भाषिक संकेत

वे विशिष्ट संकेत जिनको **भाषा–माध्यमिक** होना अनिवार्य है। और जो **विशेष अर्थ** रखते हैं। जो सामान्य नहीं रहकर कृति की **साभिप्रायता से जुड़े** रहते हैं[6]:

परासंदेशीय स्वन (Hypogramic Phonenue)

रचना में दूसरी स्थिति वहां होती है जहां स्वन से निर्दिष्ट होने वाले संकेत विशिष्ट हो जाते हैं। रचना में साभिप्रायता लिए होते हैं– उदाहरणस्वरूप निराला की ''कुकुरमुत्ता'' कविता में ''केपीटलिस्ट'' शब्द है–

''अबे, सुन बे, गुलाब,
भूल मत कर जोपाई खुशबू, रंग औ' आब
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर हतराता है केपीटलिस्ट।''

यहां केपीटलिस्ट शब्द में ''ई'' की मात्रा का प्रयोग रचना में निहित अर्थ को अधिक तीव्र कर रहा है, उससे नफरत और हिकारत की ध्वनि पैदा की जा रही है। अतः यहां परासंदेशीय स्वन की स्थिति मानी जाएगी।[7]

परासंदेशीय रूप (Hypogramic Morph)

जब रूपस्तर पर भाषा में किसी तरह का अध्याहार हो जाए अथवा स्वीकृत मानक रूप की जगह कोई दूसरा रूप स्वीकार कर लिया जाए, तो वहां भाषा का रूप परासंदेशीय हो उठता है। जैसे ''निराला'' की ''प्यासी'' मरने वाली मृग की मरीचिका है। पंक्ति में से परसर्ग का अध्याहार किया गया है। इससे उसकी साभिप्रायता प्यास की असीमता को द्योतित करती है। अतः यहां रूप परासंदेशीय हो उठा है।

परासंदेशीय शब्द (Hypogramic Lexis)

वे शब्द जो रचना में परासंदेशीय साभिप्रायता प्रगट करते हैंः उदाहरणस्वरूप ''निराला'' की कविता ''गर्म पकौड़ी'' में ''ब्राह्मण'' जैसे मानक शब्द के लिए ''बम्हन'' शब्द के साभिप्राय विभाषिक प्रयोग से, यह शब्द, परासंदेशीय हो उठा है। जैसे कवि ने लिखा है–

''अरी, तेरे लिए छोड़ी
बम्हन की पकाई
मैंने घी की कचौड़ी''

परासंदेशीय वाक्य संरचना (Hypogramic Structure)

कृति में वे वाक्य जो अपने पदक्रम, अन्वय, निकटस्थ अवयव, केन्द्रियता, मूलवाक्यता, रूपांतरित वाक्यता, बाह्य संरचना, आतरिक संरचना, परिवर्तन आदि से रचना की साभिप्रायता को लिए ही, पूरी रचना का केन्द्र घोषित हो सकने में समर्थ हों, वे वाक्य–संकेत परासंदेशीय वाक्य–संरचना का अंग बनते हैं। उदाहरणस्वरूप ''निराला'' की आज प्रथम गायी पिक पंचम पंक्ति

ली जा सकती है। यहां वाक्य कारक और लिंग के सम–नुहरा भंग की दृष्टि परासंदेशीय हुआ है। डॉ. शीतांशु के अनुसार पंक्ति को समनुहारी रूप में आज प्रथम बार पिक ने पंचम गाया होना चाहिए। इस परासंदेशीय पंक्ति में उनके अनुसार जो कोमल और तीव्रता संवेदना है, उसका पूरा ही अभाव हो जाता है।[8]

परासंदेशीय प्रोक्ति (Hypogramic Discourse)

किसी बात को कहने के लिए प्रयुक्त वाक्यों के समुच्चय को ''प्रोक्ति'' कहते हैं जिसमें एकाधिक वाक्य आपस में सुमंबंद्ध होकर अर्थ और संरचना की दृष्टि में एक इकाई बन गए हो। परासंदेशीय प्रोक्ति का संकेत, पूरी रचना के अर्थ को प्रस्तुत करने वाला होना अथवा कृति में उसकी साभिप्रयता स्पष्ट लक्षित होगी। दृष्टांत में मुक्ति बोध की कविता ''मूल–गल्ती'' की अंतिम पंक्तियॉ देखें तो एक ओर तो तत्सम शब्द, और समासमलक शब्दावली से परासंदेशीय हो उठी है, शेष कविता फारसी उर्दू बहुल शब्दावली युक्त कविता है, दूसरी ओर जो गुप्त स्वणक्षिर है, जो ''कैदकर लाया गया ईमान है, उसको संकल्प से प्रतिशोध अवश्यम्भावी है–

कविता का अंतिम चरण देखें–

''हमारी हार का बदला चुकाने जरूर
आएगा संकल्पधर्मा चेतना का रक्तप्लावित
स्वर, हमारे ही हृदय का गुप्त स्वणचिर
प्रकट होकर विकट हो जाएगा।''[9]

परासंदेशीय अर्थ (Hypogramic Semantion)

परासंदेशीय अर्थ कृति में विभिन्न साभिप्राय दिशाओं में खुलते हैं। यहां मूल अर्थकों व्यक्त करने वाले वाक्य से भिन्न कोई वाक्य बाहर–संरचना के स्तर परउपस्थित तो होता है, पर गहन संरचना के स्तर पर मूल अर्थ से जड़ा है। वहां अर्थ परासंदेशीय होकर मुखर होता है। निराला की कविता ''राम की शक्ति पूजा'' से इसका उदाहरण दृष्टव्य है–

''रावण, रावण, लम्पट, खलकल्मष–गताचार
जिसने हित कहते किया मुझे पाद–प्रहार....''

पहले शब्द रावण संज्ञा रूप में व दूसरा शब्द विशेषण रूप में इनके क्रमशः अर्थ प्रचलित राक्षस की संज्ञा रूप, व द्वितीय रूलाने वाले व्यक्ति की दारूषा को दशनि के अर्थ में हुआ है। ऊपर कविता में कहीं रावण शब्द का प्रयोग इस अर्थ में नहीं हुआ है। अतः यह शब्द परासंदेशीय हो गया है।[10]

परासंदेशीय विशिष्ट भाषेतर संकेत

वे संकेत जो साभिप्राय हैं, पर भाषाबद्ध नहीं है, कृति में प्रयुक्त होते हैं, इनमें भाषेतर परासंदेशीय–सम्मूर्ति परक संकेत, ध्वनियॉ और आंगिक संकेत–सम्मिलित किए गए हैं वे हैं–

भाषेतर परासंदेशीय सम्मूर्ति (Hypogramic Icon)

अंग्रेजी शब्द ''आइकन'' का हिन्दी अनुवाद सम्मूर्ति है। सम्मूर्ति वस्तुओं के बाह्य पक्ष को दर्शाती है, जो चेतना में पड़े–बिम्ब को सूचित करती है''[11] अर्थात् चेतना वरूय में पड़ी वस्तु का प्रतिबिम्ब ही सम्मूर्ति है।

सम्मूर्ति के साभिप्राय प्रयोग जिन रूपों में हो सकते हैं।

स्थापत्य

स्थापत्य में परासंदेशीय संकेतत लक्षित हो सकते हैं जैसे– आगरा में फतेहपुर सीकरी में स्थित जिन समस्त सथापत्य, मुगलीय कला का नमूना है जबकि वहां एक जगह पर हिन्दू–मंदिर का स्थित होना, जो अकबर बादशाह ने अपनी हिन्दू रानी जोधाबाई के लिए बनवाया था। परासंदेशीय स्थापत्य का श्रेष्ठ उदाहरण है।

मूर्ति

मूर्ति में इसका उदाहरण उसी भांति है जैसे अजन्ता–अलोरा की मूर्तियों के बीच बुद्ध अथवा जैन जैसे महापुरूषों की मूर्ति स्थापित कर देने से, वे परमसंदेशीय हो जाएंगी।

चित्र

भाषेतर संकेतों में चित्र वहां परासंदेशीय हो उठता है जब वह अन्य एक ही तरफ की कोटियों में, अथवा एक ही नमूने में कोई भिन्न कोटि अथवा नमूना प्रदर्शित करें। जैसे वे नृत्य–चित्रों की प्रदर्शिनी में कोई मूर्ति–कला अथवावास्तुकला से युक्त कोई चित्र वहां प्रदर्शित कर दे। तो वहां इसकी स्थिति परासंदेशीय हो जाएगी।

नृत्य

नृत्य में परासंदेशीय संकेत भी उसी तरह मिल जाते हैं जैसे भरत नाट्यम करते कोई अचानक कत्थक का अभिनय शुरू कर दे। नृत्य में परासंदेशीय संकेत नृत्य की विशेष गति की के आवर्तन से भी निरूपित होते हैं। नृत्य को गत्यात्मक सम्मूर्ति माना जाता है।

परासंदेशीय भाषेतर ध्वनियॉ

सांगीतिकध्वनियां

परासंदेशीय संकेत आवर्तन से उत्पन्न होते हैं, परासंदेशीय होने की दूसरी स्थिति वहां उत्पन्न होती है जहां निश्चित संरचना में अन्तरण हो। ध्रुपुद की गायकी में आवर्तन अधिक है। एक राग के भीतर दूसरे राग के प्रवेश से ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

विसंगत–ध्वनियां

उदाहरण में निराला की कविता ''ताककम सिनवारि'' कविता में ''विसंगत ध्वनियॉ'' मिलती है। जैसे–

इरावति समक कात्,
इरावति सम ककात्।[12]

अन्य उदाहरण में भुवनेश्वर के एकांकी ''तांबे की कीड़े'' में अनाउंसर महिला में द्वारा मंच पर बार–बार झुनझुना बजाना, विसंगत ध्वनि की सृष्टि ही है, अनाउंसर महिला पहली बार झुनझुना बजाती मंच पर आती है। एकांकीकार के शब्दों में– 'एक दीवार से जरा हटाकर काला–स्किन खड़ा किया गया है जिसके बराबर अनाउंसर जिसे स्त्री होना ही चाहिए खड़ी है। में एक बड़ा–सा तिब्बती लामाओं का सा झुनझुना है।''[13]

कुल मिलाकर इस एकांकी में अनाउंसर महिला तेईस बार झुनझुना बजाती हुई विसंगत ध्वनि की सृष्टि करती है।

भाषेतर परासंदेशीय आंगिक संकेत

दृष्टि संकेत

जहां दृष्टि संकेतक बनकर संकेतित करती हो वहां दृष्टि संकेत होता है। दृष्टांततः हजारी प्रसाद द्विवेदी के ''अनामदास का पोथा'' उपन्यास का निम्नलिखित उदाहरण लें–

''वे कुछ और कहें, उसके पहले ही जाबला की आंखों से उनकी आंख मिली। उस दृष्टि में कातर अम्यर्थना थी....''[14]

यहां आंखों से आखें मिलने की दृष्टि भाषा कातर अम्यर्थना के भाव के व्यक्त कर रही है। जिस कारण यह संकेत परासंदेशापरक हो उठे हो।

स्पर्श संकेत

जहां संकेतित स्पर्श के संकेतक से स्पष्ट हो वहां इस प्रकार का संकेत होता है। उदाहरण प्रसाद की ''कामायनी'' से दृष्टिव्य है–

''स्पर्श करने लगी लज्जा ललित कर्प कपोल
खिला–पुलक कदंब सा था भरा गद्‌गद् बोला''[15]

यहॉ लज्जा के द्वारा कर्प–कपोल के स्पर्श करने में श्रद्धा के मुखमंडल पर छाने वाली लज्जा व्रीड़ा संकेतित होती है।

मौन संकेत

भाषाहीनता या मौन में संकेतक बन कर संकेतित करने की क्षमता होती है। प्रसाद के नाटक ध्रुवस्वामिनी से इसका उदाहरण लें–

''ध्रुवस्वामिनी .....'' साथ वाली खड्‌गधारिणी की ओर देखकर क्यों मन्दाकिनी नहीं आई? वह उत्तर नहीं देती है। बोलती क्यों नहीं?... इस शैलमाला की तरह मौन रहने का अभिनय तुम न करो, बोलो। वह दांत निकालकर विनय प्रकट करती हुई कुछ और आगे बढ़ने का संकेत करती है..... इस राजकीय अन्तःपुर में सब जैसे एक रहस्य छिपाये हुए चलते हैं, बोलते हैं और मौन हो जाते हैं। खडगधारिणी विवराता और भय का अभिनय करती हुई आगे बढ़ने का संकेत करती है तो क्या तुम मूक हो?.....[16]

यहां खड्‌गधारिणी द्वारा मौन ध्रुवस्वामिनी की रक्षा हेतु अनुचित स्थान जानकर, रह जाना, जिससे रानी का अहित न हो, और वह चन्द्रगुप्त की चर्चा उससे कर सके।

प्रकिया का प्रश्न

परासंदेशीय प्रतिमान को अनुप्रयुक्त करने की प्रकिया त्रि–स्तरीय होती हैः

वाक्यिकी Syntactics की प्रकिया

अर्थिकी Semantics की प्रकिया

तथ्यिकी Pragmatics की प्रकिया

वाक्यिकी की प्रकिया

रचना अथवा कृति में वाक्यिकी प्रकिया वहां परासंदेशीय होती है जहां वाक्य की संरचना समांतरित रूप में ज्ञनेत अथवा अग्नेत सरोंधी अथवा मोचक या एंडोसेंट्रिक । अथवा एंडोसोसैंट्रिक हो अथवा इनमें से अपने युग के पूर्ववर्ती से विचलित होकर उत्तरवर्ती रूप में प्रस्तुत होती हो ।

इनेत वाक्य

जिस वाक्य में वाक्य–सरंचना तो समान हो किन्तु शब्द बदल जाएं वहां इनेत सरंचना होती है । जयशंकर प्रसाद की कहानी ''आकाशदीप'' से इसका उदाहरण देखें –

1– तारिकाओं की मधुर –ज्योति वनक्षत्रों की मधुर छाया । दोनो अज्ञेय – द्रोही

2– वे मुझसे घृणा करते हैं करें , मेरा तिरस्कार करते हैं करो वाक्यों में सरंचना समान रही है , किन्तु शब्द बराबर बदले हैं । अतः यहां इनेत वाक्य है ।

अग्नेत वाक्य

जिस वाक्य में वाक्य –संरचना तो परिवर्तित हो जाए, पर शब्द पूर्ववत् रहे वहॉ अग्नेत वाक्य संरचना होती है। जैसे–राज ने श्याम को पीटा, अग्नेत वाक्य में यह श्याम राजू द्वारा पिट गया होगा, परिवर्तित संरचना कारण यह अग्नेत वाक्य है।

संरोधी वाक्य–संरचना

यह संरचना पूरी वाक्य–संरचना के बीच में वाक्य उहेश्य पूर्ति को अपनी उपस्थिति से बाधित करती है। जयशंकर प्रसाद की कहानी ''आकाशदीप'' से इसका उदाहरण लें– ''भीषण आंधी पिशाचली के समाज नाव को अपने हाथों में लेकर कन्दुक क्रीड़ा और अट्टहास करने लगी।''[19]

यहां कोष का वाक्यांश संरोधी संरचना प्रस्तुत करता है।

मोचक वाक्य

मोचक वाक्य प्रवाहमय होता है। इसमें क्रिया के बाद दूसरी क्रिया चलती जाती है, साथ ही ''और'' ''तथा'' जैसे संयोजनों का प्रयोग होता चलता है। जैसे– ''कब तक पुकारू'' उपन्यास से उदाहरण लें।... अब जा निकलता तो गुन गुंजार काता, फूलों की प्यालियॉ से नया नया रस लेता और परागों में लौटकर विहार करता और फिर अपने गीतों में प्रिया की पग ध्वनि को गुंजरित कर उठता''[20] पूर्ण वाक्य में ''और'' संयोजक के साथ प्रवाह है।

एकसी–सेन्ट्रिक

ऐसी वाक्य–संरचना में न्यूनतम संज्ञा क्रिया संबंध रहता है। जैसे– ''वह चला गया''/ वह आ जाएगा आदि।

एण्डोसेन्ट्रिक

ऐसी वाक्य–संरचना में विशेषण विशेष्य संबंध प्रधान होता है। ''उसकी बड़ी–बड़ी नीली आंखें लगातार देखे जा रही थी।

अर्थिकी की प्रक्रिया

किसी भी पाठ में अर्थिकी की प्रक्रिया में जिन अवयवों से परासंदेशीय आती है वे अवयव निम्नलिखित हैः

आवर्तन

रचना में जहां शब्दों अथवा वाक्यों के दोहराव से अर्थ को अधिक बल मिलता हो, अर्थ अधिक सुस्पष्ट, व प्रभावपूर्ण हो वहां, आवर्तन की स्थिति परासंदेशीय हो जाती है। जैसे– रांगेय राघव के उपन्यास ''कब तक पुकारू'' से इसका उदाहरण लें– ''फगनौटी सकोरे ले लेकर चलने लगी... हवा ने उसके सूखे पत्तों को दूर–दूर उड़ा दिया और नया पेड़ ऐसा हिल–हिल चमचमाने

लगा कि खिरनी लजा गई। उसने कहा कि देखो, मुआ कैसा इतरा रहा है, कल तक नंगा–नंगा हो रहा हो था।''[21]

यहां ले–लेकर, दूर–दूर, हिल–हिल, नंगा–नंगा शब्दों का आवर्तन, अर्थ को अधिक तीव्र कर रहा है।

पर्याय

कृति में शब्दों को अधिक स्पष्ट करने, उसकी संवेदना को अधिक तीव्र करने के लिए पर्याय रूप में शब्दों का प्रयोग किया जाए। जैसे– अज्ञेय की ''द्रोही'' कहानी में उदाहरण दृष्टव्य है– ''यह प्रेम नहीं है। यह है वासना, काम–पिपासा, इन्द्रिय लिप्सा।''[22]

तीनों शब्द एक ही अर्थ की दृष्टि के लिए प्रयुक्त है। अतः यह अर्थ परासंदेशीय हो उठता है।

विरोधी अर्थवत्ता

जहां शब्द परस्पर विरोधी अर्थवत्ता लिए भाव–सम्प्रेषण के लिए प्रयुक्त हों। जैसे– अज्ञेय की ''अमर वल्लरी'' कहानी में वाक्य इसका उदाहरण स्पष्ट करता है– ''प्रेम में दुःख–सुख, शान्ति और व्यथा, मिलन और विच्छेद, सभी हैं। कि बिना वैचित्र्य के प्रेम की वहीं सकता...'' ।[23]

सहवर्गीय अर्थवत्ता

जहां एक ही संदर्भ, एक ही प्राचल से सम्बंधित अन्यान शब्द जुटाए गए हों ओर उनमें अर्थस्तर पर घना संबंध हो वहां सहवर्गीय अर्थवत्ता होती है। जैसे– ''चित्रलेखा'' उपन्यास में इसका उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

''चित्रलेखा के सुन्दर कमल से कोमल पैरों ने घुंघरूओं के साथ सम पर ताल दी और नृत्य आरम्भ हो गया। चित्रलेखा जिस स्थल पर जाती थी, विद्युत की भांति चमक उठती थी। मृदंग का ताल मानों मेघों का गंभीर गर्जन था। चारों ओर गहरा सन्नाटा छाया हुआ था।[24]

इस सहवर्गीय अर्थवत्ता का श्रेष्ठ उदाहरण माना जा सकता है, इसमें एक और नृत्य , घुंघरू, मृदंग ताल है, वहां नर्तकी चित्रलेखा, उसके सुन्दर कोमल से कोमल पैर, उनका घुंघरूओं से समताल देना, विद्युत की भांति चमकना, ताल का मेघों की तरह गंभीर मर्दन होना। प्रभावस्वरूप सन्नाटा छा जाता। पूरा दृश्य एक ही नर्तकी के नृत्य व ताल से जुड़ा है जिसके प्रभाव से अर्थपूर्ण सन्नाटा छा गया है।

अवयवभूतार्थता

अवयवभूतार्थता में अर्थ का परमाणु विखिण्डन होता है। इसमें किसी शब्द के अर्थ को छोटे–छोटे कई अनुमानों में बांटा जाता है। जिनसे समन्वित होकर वह महत्त्वपूर्ण अर्थ होता है। जैसे–

पशु=

+ चौपाया
+ विवेकहीन
+ वन्य
+ पालतू

उच्चावच अर्थवत्ता

वृहत्तर शब्द में दूसरे सीमित शब्द की अर्थवत्ता स्वतः निहित होती है। यह संबंध दो प्रकार का होता है–

संकुचित उच्चाव अर्थवत्ता
विस्तृत उच्चावच अर्थवत्ता

कभी यह अर्थवत्ता संकुचित से विस्तार की ओर यात्रा करती है, उदाहरण निम्नलिखित है–

विवेकसम्पन्न – मनुष्य	पालक	
पशु–	मांसाहारी	वन्य
विवेकहीन – चौपया –	पालतू	
	शाकाहारी	वन्य

उपर्युक्त उदाहरण को ही यदि विपरीत क्रम में रखें तो यह यात्रा विस्तार से संकुचन की ओर होगी। तब यह संकुचित उच्चावच अर्थवत्ता का उदाहरण होगा।

तथ्यिकी प्रक्रिया

तथ्यिकी की प्रकिया के अंतर्गत प्रायः वचनकर्म सिद्धांत और विवक्षा–सिद्धांत का विवेचन किया जाता है।

वचन कर्म का सिद्धांत

भाषिक वचन कर्म

किसी भी पाठ की सम्पूर्ण अभिव्यक्तियॉ सबसे पहले भाषिक वचनकर्म का उदाहरण होती है। इसमें व्याकरणिकता का पक्ष प्रमुख होता है।

भाषेतर वचन कर्म

इन अभिव्यक्तियों में वृत्तिकता का पक्ष मुख्य रहता है। व्याकरणिक अभिव्यक्ति पक्ष गौण हो जाता है। भाषेतर वचन कर्म मं परासंदेश जिन विभिन्न स्तरों पर क्रियाशील होता है। उनका स्पष्टीकरण निम्नलिखित ढंग से किया जा रहा है।

आदेश

जहां कृति में पात्रों के बीच स्थिति अनुसार आदेश देने का भाव हो। जैसे– ''चित्रलेखा'' उपन्यास में उदाहरण दृष्टव्य है'' ..... अच्छा, यह मदिरा का पात्र अपनी स्वामिनी को दो ''इतना कहकर बीजगुप्त ने सुगन्धित मदिरा से भरा हुआ स्वर्ण पत्र श्वेतांक के हाथ में दे दिया।''[25]

यहां बीजगुप्त द्वारा श्वेतांक की आदेश देने का भाव है जिससे उनके वैभव लक्षित होता है।

आग्रह

जहां पात्रों में स्थिति अनुसार आग्रह का भाव हो जैसे– ''चित्रलेखा'' में उदाहरण द्रष्टव्य है। बीजगुप्त ने रत्नाम्बर से पूछा– ''महाप्रभु ने मिस कारण दास पर कृपा करने का इस समय कष्ट उठाया।''

प्रस्तुत वाक्य में बीजगुप्त का गुरूदेव द्वारा वहां आने के कारण को बताने का आग्रह है।

निर्देश

जहां आदेश में कार्य को करने में कुछ ब्योरा भी दिया जाए।

जैसेः उदाहरण ''चित्रलेखा'' से..... विशालदेव। मेरा शिष्य होकर तुम्हें जो पहले काम करना पड़ेगा, वह यह होगा कि तुम वासना को त्याग कर अपने मन को शुद्ध करो। इच्छाओं को दबाना उचित नहीं, इच्छाओं को तुम उत्पन्न ही न होने दों।... ''यदि एक बार इच्छा उत्पन्न हो गई, तो फिर वह प्रबल रूप धारण कर लेगी। इसलिए तुम्हारा कर्त्तव्य होगा, इच्छाओं को सदा के लिए भार डालना।''[26]

यहां कुमार गिरि द्वारा विशाल देव को वासना कात्याग, व मन को शुद्ध करने के निर्देश हैं।

प्रश्न

उदाहरण ''चित्रलेखा'' ''छलकते हुए मदिरा के पात्र को चित्रलेखा के मुख से लगाते हुए बीजगुप्त ने कहा.....'' चित्रलेखा। जानती हो जीवन का सुख क्या है?

बीजगुप्त के जिज्ञासा भरे वाक्य में प्रश्न का भाव निहित है।

विस्मय

उदाहरण ''चित्रलेखा'' से ''बीजगुप्त हंस पड़ा''– ''सोच रहा हूँ चित्रलेखा, यौवन का अंत क्या होगा'' चित्रलेखा भी हस पड़ी, पर हसी क्षणिक थी... आज एकाएक फिर उसी प्रश्न को सुनकर वह चौंक उठी– ''जीवित मृत्यु।''

बीजगुप्त के जीवित मृत्यु के रहस्यभरे प्रश्न को सुनकर चित्रलेखा का विस्मय युक्त हो जाना में यह भाव निहित है।

चुनौती

उदाहरण ''चित्रलेखा'' से ''कुमारगिरि के क्षेत्र क्रोध से लाल हो गए–'' इस सभा में ''कोई भी व्यक्ति पराजित नहीं कर सकता और न मुझको दण्ड देने का कोई व्यक्ति साहस ही कर सकता है।''[27]

पूर्व प्रोक्ति में कुमारगिरि के क्रोध युक्त वाक्य कहने का है जिनसे उनका तप को अभिमान झलकता दिखाई पड़ता है।

क्रोध

उदाहरण ''चित्रलेखा'' से ''कुमारगिरि के पास पहुंच कर वह रूकी'' योगी। तुम्हें दण्ड देने का अधिकार मुझको सौंपा गया है और मैं तुमको दण्ड देने पर तुली हुई हूँ मेरा दण्ड देने का साहस देखो।''

चित्रलेखा द्वारा कुमारगिरि को किसी भी भांति अपने अधिकार को जतला कर उसे दण्डित करने की धमकी।

खीझ

''ध्रुवस्वामिनी'' से इसका उदाहरण द्रष्टव्य है–

कोमा : निर्विकार भाव के संसार में बहुत सी बातें बिना अच्छी हुए भी अच्छी लगती हैं और बहुत सी अच्छी बातें बुरी मालूम पड़ती है।

शकराज : झुंझालकर तुम तो आचार्य मिहिरदेव की तरह दार्शनिको की सी बातें कर रही हो।[28]

शकराज की खीझ यहां दृष्टव्य है।

ईर्ष्या

ध्रुवस्वामिनी से उदाहरण दृष्टवय है–

रामगुप्त : ध्रुवस्वामिनी, निर्लज्जता की भी एक सीमा होती है।

ध्रुवस्वामिनी : मेरी निर्लज्जता की भी एक सीमा होती है। ध्रुवस्वामिनी : मेरी निर्लज्जता का दायित्व क्लीव का पुरूष पर है। स्त्री की लज्जा लूटने वाले उस दस्यु के लिए मैं.....।[29]

परोक्ष रूप से ध्रुवस्वामिनी का रामगुप्त के प्रति क्रोध व ईर्ष्या का भाव व्यक्त हुआ है।

प्रत्ययनीयता

ध्रुवस्वामिनी से उदाहरण दृष्टव्य है–

रामगुप्त : ''यह उन्मत्त प्रलाप बंद करो। चन्द्रगुप्त। तुम मेरे भाई ही हो न। मैं तुमको क्षमा करता हूँ।''

चन्द्रगुप्त : ''मैं उसे मानता नहीं और क्षमा देने का अधिकार भी तुम्हारा नहीं रहा.....।''

रामगुप्त के वाक्य में अपनी रक्षा के लिए चन्द्रगुप्त के प्रति भाई के नाते को जगाने के लिए प्रयत्नशीलता का भाव है।

प्रभावी वचन–कर्म

यह वहॉ उपस्थित होता है जहां भाषेतर वचन कर्म को अनुपालित किया जाता है।

विवक्षा का सिद्धांत (Theory of Indicturre)

इस सिद्धांत को चार सूत्रों में व्याख्यायित किया जाता है–

परिमाणसूत्र

गुणात्मक सूत्र

संबंध सूत्र

प्रविधि सूत्र

परिमाण सूत्र (Maximum of Quantity)

वाक्य की योजना जहां आवश्यकतानुसार संक्षिप्त अथवा, विस्तारपूर्वक और अनुकूल न होकर उसके विपरीत हो। जैसे– आधे–अधूरे नाटक में इसका उदाहरण देखें–

पुरूष एक : ''आ गई दफतर से लगता है आज बस जल्दी मिल गई''

स्त्री : यह अच्छा है कि दफतर से आआ, तो कोई घर पर दिखे ही नहीं, कहां चले गए थे तुम।''

यहां प्रश्न में पूछा कुछ जा रहा है उत्तर में और कुछ कहा जा रहा है।

गुणात्मक सूत्र (Maximum of Quality)

इसकी स्थिति वहां होती है जहां गुणात्मक धारणाएं खण्डित हों जैसे– कोई व्यक्ति किसी कमरे का सारा फनीर्चर तोड़ डाले, और उसका कोई मित्र यह कहे कि यह व्यक्ति कुछ नशे में था। तब उसके कथन का गुणात्मक सूत्र खण्डित करने का उदाहरण माना जाएगा।

संबंध सूत्र (Maximum of Relation)

जहां संबंधों की मर्यादाएं खण्डित होने लगे वहॉ सूत्र खंडन की ओर स्थिति होती है। जैसे कमरे में ''क'' और ''ख'' व्यक्तियों में ''ग'' व्यक्ति को लेकर बातचीत होने लगे और ''ग'8 व्यक्ति पर्दे के भीतर है। ''क'' व्यक्ति ''ग'' व्यक्ति की उपस्थित से अनभिज्ञ है और उसके विरोध में यह रहे कि ''ग'' मुझे बहुत बोर करता है। ऐसे में ''ख'' व्यक्ति इस बात को जानते हुए विषय को बदलना

चाहे और कहे कि ''आज कोई नया चुटकला तुमने मुझे नहीं सुनाना'' तो यहां संबंध सूत्र खण्डित हो जाएगा।

प्रविधि सूत्र (Maximum of manner)

जहां स्वीकृत अर्थ के अतिरिक्त उसे आगे खण्डित कर किसी वाक्य अथवावस्तु के विभिन्न अर्थ निकाले जाए वहां– प्रविधि सूत्र का उदाहरण मिलता है–

जैसे निराला की कविता की पंक्ति लें–

''रूखी री यह डाल वसन वासन्ती लेगी– अस्पष्ट पंक्ति है।''

स्थूल रूप में इससे निकलता है कि रूखी दिखाई देने वाली डाल वसन्त ऋतु में नए वस्त्र धारण कर लेगी अर्थात् यह फूल पत्तियों से भर जाएगी– पर इसके अनेक अर्थ की संभावना प्रविधि सूत्र को खण्डित करती है।

- शिव की प्राप्ति हेतु तपस्या करने से क्षीण दिखने वाली पार्वती प्रणय–सूत्र में बंध जाने से, वासन्ती वस्त्र धारण कर लेगी, प्रसन्नता और प्रफुल्लता से उसका रूप/सौन्दर्य दीप्त हो उठेगा।
- साधारण तपस्विनी भविष्य में अभीष्ट पुरूष से मिलने, उससे प्रणयसूत्र में बंध जाने के कारण वह वासन्ती वस्त्र धारण कर लेगी, उसका वियोग दूर हो जाएगा और संयोग हो जाएगा।
- भारत माता गुलामी की जंजीरों मे जकड़ी होने से क्षीण हो चुकी है। प्रतीक रूप में स्वतंत्रता और वसन्ती वस्त्र, स्वतंत्रता प्राप्त कर लेगी।

आरेख : साहित्यिक संकेतार्थ विज्ञान : प्रस्तावित प्रतिमान–प्रक्रिया

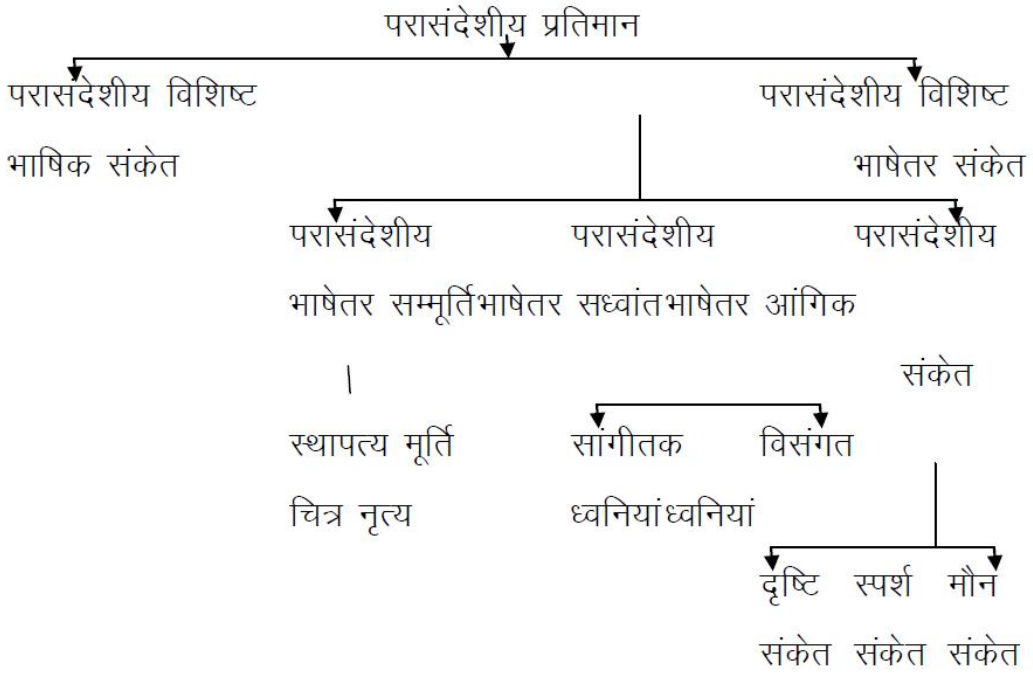

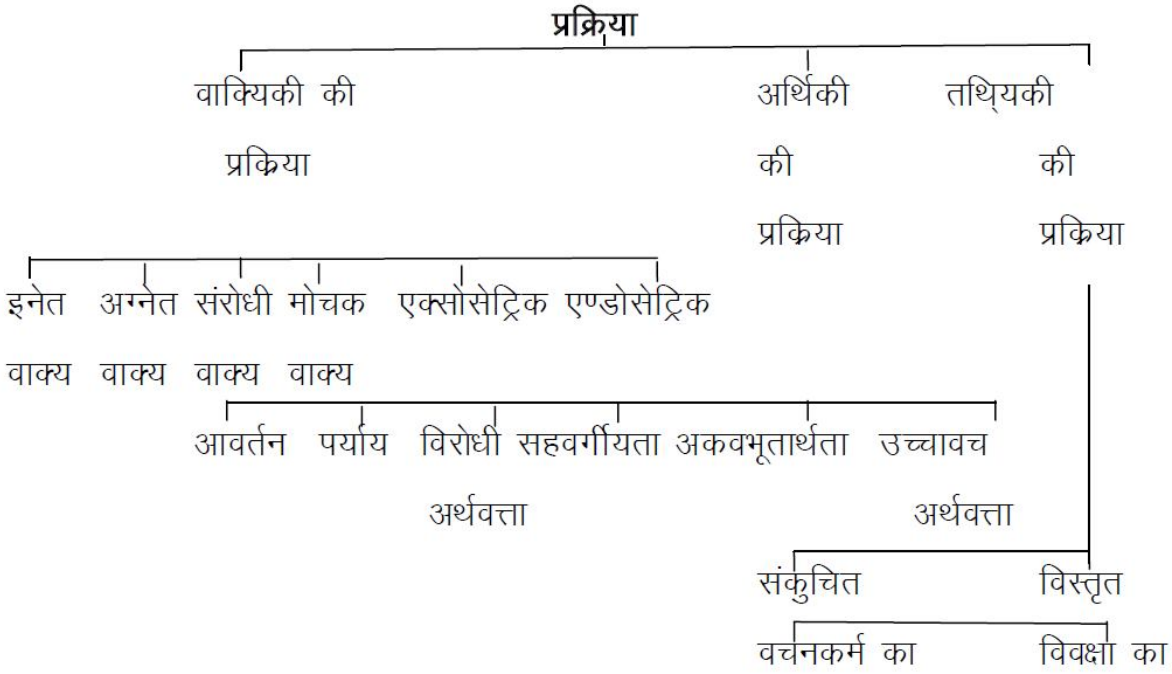

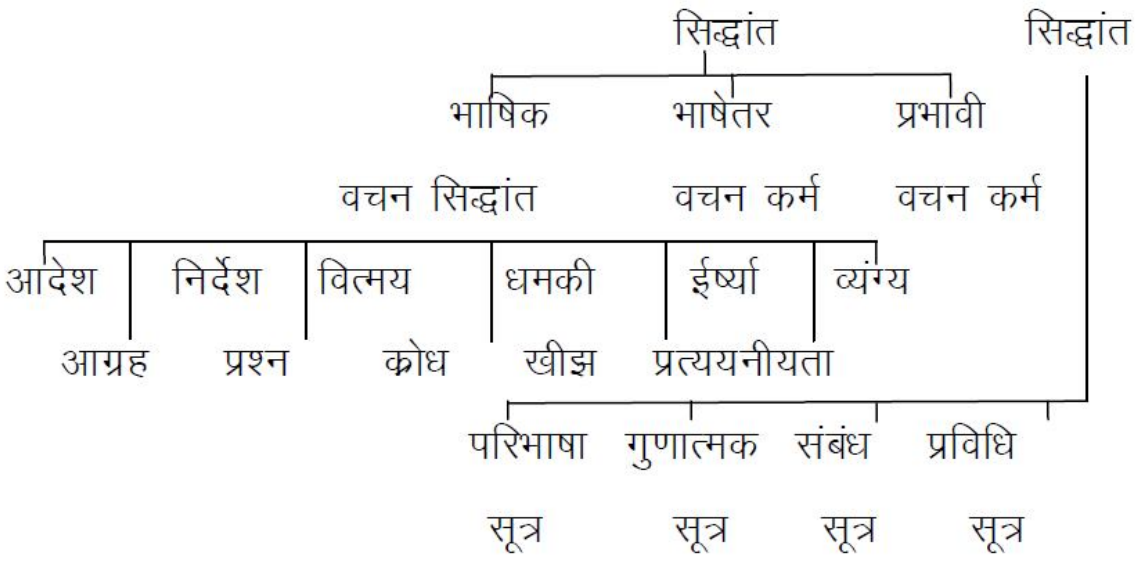

सन्दर्भ

1. पाण्डेय शशिभूषण ''शीतांशु'', शैलीविज्ञान : प्रकार और प्रतिमान, चंडीगढ़ : हरियाणा साहित्य अकादमी, 1987, पृ. 129.
2. पाण्डेय : शशिभूषण ''शीतांशु'', शैलीविज्ञान का इतिहास, दिल्ली : वाणी प्रकाशन्, 1983, पृ. 43.
3. मिखाइल रिफेतेयर, सिमिओसिस ॲव पोयट्री, लंदन : मेथुइन एण्ड कम्पनी, 1978, पृ. 43.

4. ''शीतांशु'8, शैलीविज्ञान का इतिहास, ई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 1985, पृ. 67.
5. निराला, कुकुरमुत्ता–निराला–रचनावली, सम्पा, नंद किशोर नवल, नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन, पृ. 45.
6. निराला, 'गर्मपकौड़ी'', (वशपुत्ते), निराला रचनावली, सम्प, नंद किशोर नवल, (नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1983), पृ. 58.
7. डॉ. शीतांशु, शैलाविज्ञान : प्रतिमान और विश्लेषण, नई दिल्ली : देवदार प्रकाशन, 1984, पृ.
8. मुक्तिबोध, ''भूल–गल्ती'', चॉद का मुंह टेढ़ा है, वाराणसी : भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन, पृ. 5.
9. निराला, ''शाक्ति–पूजा'', राग–विराग, सम्पा, रामविलास शर्मा, इलाहाबाद, 1985, पृ. 98.
10. जसपाल सिंह, सिमिओसिस एण्ड सिमिओटिक्स, चंडीगढ़ : लोकायत प्रकाशन, 1982, पृ. 16.
11. निराला ''ताकवर्मासनवारि'' राग–विराग, सम्पा, रामविलास शर्मा, इलाहाबाद :लोकभारती प्रकाशन, 1985. पृ. 167.
12. भुवनेश्वर, तांबे की कीड़े, एकांकी : नए–पुराने, सम्पा, शिवनंदन प्रसादउ एवं ''शीतांशु'', इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन, 1975, पृ. 19.
13. जयशंकर प्रसाद, ध्रुवस्वामिनी (इलाहाबाद : लीडर प्रेस, 1976), पृ. 16.
14. जयशंकर प्रसाद, ''आकाशदीप'' श्रेष्ठ हिंदी कहानियॉ, सम्पा, लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, इलाहाबाद : सरस्वती प्रेस, 1960, पृ0 58.
15. अज्ञेय, ''द्रोही'', अज्ञेय की सम्पूर्ण कहानियां–1, छोड़ा हुआ रास्ता, दिल्ली : राजपाल एंड संज, 1975, पृ. 93.
16. जयशंकर प्रसाद, ''आकाशदीप'', श्रेष्ठ हिंदी कहानियां, सम्पा, लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, इलाहाबाद : सरस्वती प्रेस, 1969, पृ. 55.
17. रांगेय राघव, कब तक पुकारूॅ, दिल्ली : राजकमल एंड संज, 1969, पृ. 246.
18. वही, पृ. 245.
19. अज्ञेय, अज्ञेय की सम्पूर्ण कहानियां–1, छोड़ा हुआ रास्ता, दिल्ली : राजपालएंड संज, 1975, पृ. 99.
20. वही, पृ. 245.
21. भगवती चरण वर्मा, चित्रलेखा, इलाहाबाद : लीडर प्रेस, 1977, पृ. 38.
22. वही, पृ. 15.
23. वही, पृ. 20.
24. वही, पृ. 42.
25. वही, 1976, पृ. 43.
26. वही, पृ. 61.
27. वही, पृ. 61.
28. जयशंकर प्रसद् ध्रुवस्वामिनी, इलाहाबाद : लीडर प्रेस, 1976, पृ. 43.
29. वही, पृ. 61.